किस्सा प्रारूपिक फूल का

सुशील जोशी

हमारे आसपास फूलों में ढेर सारी विविधता दिखाई देती है लेकिन पाठ्य पुस्तकों में फूल का एक ही प्रारूपिक चित्र मिलेगा। प्रारूपिक की अवधारणा के विभिन्न पहलुओं को टटोलता है यह लेख?

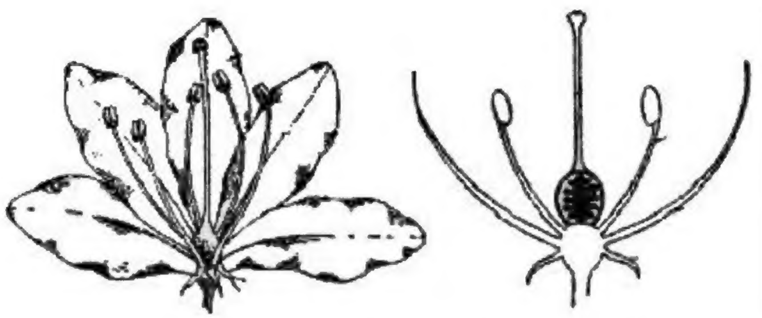
मैंने जब जीव विज्ञान पढ़ा था, तब मेरा परिचय एक प्रारूपिक फूल, एक प्रारूपिक कोशिका, एक प्रारूपिक कशेरुक, वगैरह से हुआ था। इन चीज़ों को अंग्रेज़ी में 'टिपिकल' कहते हैं। Typical Flower, Typical Cell, Typical Vertebra आदि। उस समय सोचा नहीं था कि वास्तव में प्रारूपिक कोशिका या प्रारूपिक फूल जैसी किसी चीज़ का कोई अस्तित्व नहीं है। पता नहीं क्यों नहीं सोचा था क्योंकि एक प्रारूपिक फूल का 'अध्ययन' करने के बाद हमने कई सारे फूलों का अध्ययन किया था और उनमें से कोई भी 'प्रारूपिक फूल' से हूबहू मेल नहीं खाता था; मगर किसी कारण से उस समय यह सवाल ज़ेहन में उठा ही नहीं कि फिर 'प्रारूपिक फूल' होता क्या है। शायद किसी के मन में नहीं उठता।

दरअसल यह सवाल मन में तब उठा जब सूक्ष्मजीव सम्बंधी एक कार्यशाला में पैरामीशियम के अवलोकनों पर चर्चा हो रही थी। पैरामीशियम का जो चित्र किताब में होता है वैसा वह सूक्ष्मदर्शी में दिखता नहीं है। एक तो वह चलता-फिरता रहता है, इसलिए आकृति लगातार बदलती रहती है। दूसरा, वैसे भी किताब में दिखाई सारी रचनाएं हर समय इस जीव में मौजूद नहीं होतीं। मुझे जितना याद है, उसके अनुसार कुछ रिक्तिकाएं कभी होती हैं, कभी नहीं। किताब के चित्र में ये सब एक साथ बनी होती हैं। सवाल यह उठा कि किताब में ऐसा क्यों करते हैं और इसका सीखने की प्रक्रिया से क्या लेना-देना है।

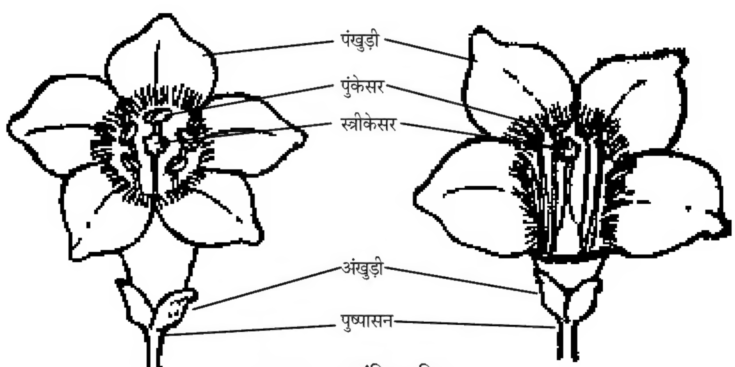
प्रारूपिक मतलब क्या?

एक प्रारूपिक फूल का चित्र देखिए और सोचिए कि क्या आपने कभी ऐसा फूल देखा है।

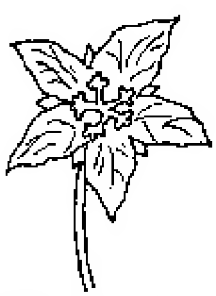
यदि आप आसपास नज़र दौड़ाएंगे तो आपको तमाम किस्म के फूल दिखेंगे। कई फूल तो ऐसे होंगे जिन्हें आप शायद फूल मानने से भी इन्कार कर दें। ऐसे



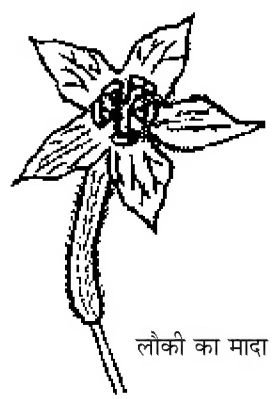
एक प्रारुपिक फूल जिस में फूल के सभी अंग उपस्थित हैं।



फूल का नामांकित चित्र



लौकी का नर फूल



लौकी का मादा फूल

फूलों के कई उदाहरण मैं दे सकता हूं मगर अभी उन्हीं फूलों की बात कर रहा हूं जिन्हें आमतौर पर फूल माना जाता है। जैसे गेंदा, गुलाब, जासौन, बेशरम, सूरजमुखी, चांदनी, मोगरा, रातरानी वगैरह। इन अलग-अलग फूलों और 'प्रारूपिक फूल' में कितनी समानता है?

जैसे कोई भी पाठ्य पुस्तक बता देगी कि प्रारूपिक फूल में बाह्यदल (अंखुड़ी), दल (पंखुड़ी), जायांग (स्त्रीकेसर का समूह) और पुमंग (पुंकेसर का समूह), ये चार अंग होते हैं। मगर कई सारे फूल ऐसे हैं जिनमें ये चारों अंग नहीं पाए जाते। वास्तव में फूल होते ही दो प्रकार के हैं - पूर्ण फूल और अपूर्ण फूल। एकलिंगी फूलों के बारे में तो आपने पढ़ा ही होगा - लौकी, गिलकी, ककड़ी, पपीता वगैरह में एकलिंगी फूल होते हैं। कुछ फूलों में जायांग होता है, तो कुछ में पुमंग - ये क्रमशः मादा फूल और नर फूल होते हैं। कुछ फूल अलिंगी भी होते हैं। किसी-किसी फूल में उपरोक्त चार अंगों के अलावा निपत्र भी पाए जाते हैं मगर हैं ये सभी फूल।

यह विविधता चकरा देगी। यदि हम यह मान लें कि फूल पौधों के प्रजनन अंग हैं तो अलिंगी फूल को स्वीकार करना थोड़ा मुश्किल ही है। मगर प्रकृति में अलिंगी फूल पाए जाते हैं। बच्चों से यदि फूल लाने को कहा जाए तो अक्सर वे गेंदे का फूल लेकर आते हैं। कारण यह है कि यह सबसे आसानी से मिल जाता है। बेशरम का फूल भी काफी प्रचलित है।

यदि फूल का विच्छेदन करना है और गेंदे का फूल ले लिया तो शिक्षक की शामत आ गई समझिए। जिसे एक फूल माना जाता है वह वास्तव में फूलों का एक समूह है, पता नहीं इसे पुष्पक्रम कह सकते हैं या नहीं क्योंकि इसमें सारे फूल एक से नहीं होते। बाहर की ओर जो पंखुड़ियां दिखती हैं उन्हेंRay florets कहते हैं जबकि अंदर की ओर Disc florets पाए जाते हैं। इनमें से कुछ फूल द्विलिंगी होते हैं तो कुछ अलिंगी।

किताब के चित्र में आमतौर पर चार या पांच पंखुड़ियां बनाई जाती हैं। मगर ढेर सारे फूलों में तीन-तीन पंखुड़ियां होती हैं।

चित्र में आमतौर पर पंखुड़ियां एक-दूसरे से अलग-अलग बनाई जाती हैं - जबकि कई सारे फूलों में पंखुड़ियां जुड़कर एक नली बना लेती हैं। दरअसल मैं इसके चक्कर में एक बार फंस चुका हूं। एक शाला के बच्चों को फूल का विच्छेदन करवाना था। मैंने उनसे कह दिया था कि वे कक्षा में एक फूल लेकर आ जाएं, तो हम बड़ी आसानी से उसकी चीरफाड़ करके देख लेंगे। अधिकांश बच्चे बेशरम का फूल लेकर आए थे। मैंने पहले उन्हें फूलों के अंगों के नाम बताए। अंखुड़ी का मामला तो ठीक निपट गया - पांच थीं। फिर बारी आई पंखुड़ी की। बच्चों ने कहा कि इसमें एक पंखुड़ी है। मगर उनकी किताब और उनके शिक्षक के मुताबिक उसमें पांच पंखुड़ी होनी चाहिए। अब समझाइए उन्हें कि ये पांच पंखुड़ियां हैं जो जुड़कर एक नलीनुमा रचना बना लेती हैं। 'प्रारूपिक फूल' के चित्र में पुंकेसर अलग-अलग होते हैं और स्त्रीकेसर अलग। मगर कई फूलों में ये दो अंग एक-दूसरे से जुड़े होते हैं।

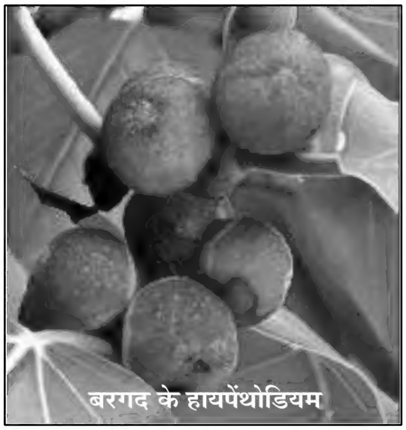
तो आपको प्रारूपिक फूल कहीं नहीं

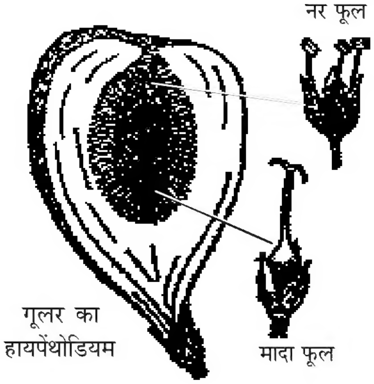


तीन पंखुड़ियों वाला फूल



निपत्र वाला फूल बोगनविला





आमतौर पर बरगद, पीपल, गूलर वगैरह में फलनुमा रचनाएं ही दिखाई देती हैं। इसे हायपेंथोडियम कहा जाता है। ये गुदेदार रचना वास्तव में फूल है। इसे काटकर देखा जाए तो भीतर नर फूलों और मादा फूलों की जमावट दिखाई देती है। फोटोग्राफ में बरगद के हायपेंथोडियम दिखाए गए है। रेखाचित्र में गूलर की खड़ी काट को दिखाया गया है।

मिलेगा। मगर प्रारूपिक फूल हमारी किताबों की शोभा बढ़ा रहे हैं।

कोशिका

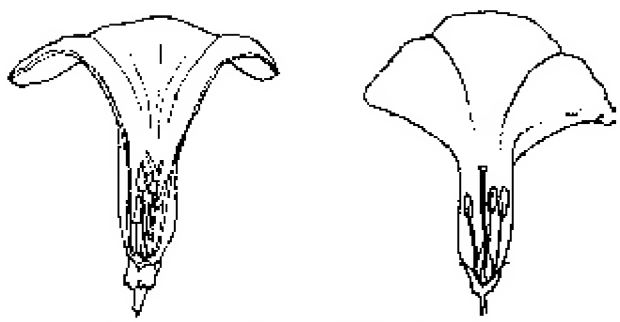
ऊपर मैंने फूलों की बात की मगर लगभग यही बातें कोशिका और प्रारूपिक कोशिका पर भी लागू होंगी। कोशिकाएं भी इतने प्रकार की होती हैं, उनमें भी इतनी विविधता होती है कि एक प्रारूपिक कोशिका की बात लगभग बेमानी हो जाती है। पादप कोशिका और जंतु कोशिका में तो बहुत सारे अंतर होते ही हैं, विभिन्न वनस्पति कोशिकाओं और विभिन्न जंतु कोशिकाओं में भी खूब विविधता होती है। साइज़ को लेकर, आकृति को लेकर, उनमें पाए जाने वाले अंगों-उपांगों को लेकर कोशिकाएं बहुत अलग-अलग होती हैं।

प्रारूपिक का निर्माण

आमतौर पर प्रारूपिक एक अमूर्त अवधारणा होती है - एक ही किस्म की कई सारी चीज़ों का अध्ययन करके उनमें से कुछ सामान्य लक्षणों का एक समुच्चय (set) होती है प्रारूपिक की अवधारणा। यह प्रक्रिया सिर्फ विज्ञान में ही नहीं, लगभग सारे विषयों में मिलेगी। जैसे सामाजिक विज्ञान में एक प्रारूपिक गांव का चित्रण मिलेगा या एक प्रारूपिक मुगल सामंत का चित्रण मिलेगा, यद्यपि ऐसा नहीं है कि सारे गांव एक से होते हैं या सारे मुगल सामंत एक से होते थे। मगर इनमें कुछ लाक्षणिक गुण होते हैं। इनमें मौजूद विविधता के बावजूद ये लाक्षणिक गुणधर्म इन्हें एक विशिष्ट समूह की पहचान देते हैं। यह



जासौन का पुष्प जिसमें पुंकेसर और स्त्रीकेसर प्रमुखता से दिखाई दे रहे हैं। यदि जुड़े हुए पुंकेसर-स्त्रीकेसर देखना हो तो अकाव या आकड़ा के फूल देखिए।



पंखुड़ियां जुड़कर नली बना लेती हैं - बेशरम का फूल

पहचान कई दृष्टि से उपयोगी होती है। जैसे अर्थ-व्यवस्था में गांव का एक विशिष्ट स्थान है। योजनाएं बनाने में गांवों की कुछ विशिष्ट ज़रूरतें होती हैं। गांवों के कुछ खास मुद्दे होते हैं, जो शहरों से अलग होते हैं। यानी प्रारूपिक गांव की धारणा कई तरह से उपयोगी साबित होती है। खासतौर से अध्ययन के लिए यह एक उपयोगी श्रेणी है, बशर्ते कि आप यह ध्यान में रखें कि कई सामान्यताओं के बावजूद उनमें काफी सारी विविधता भी है। गांव और शहर की तुलना करनी हो, तो आपको एक प्रारूपिक शहर व प्रारूपिक गांव की धारणा से बहुत मदद मिलेगी।

TYPICAL का अर्थ

कई बार किताबों में सामान्य शब्द का उपयोग किया जाता है। दरअसल Typical को सामान्य कहने से थोड़ा गलत अर्थ निकलता है। सामान्य को प्रायः Normal के अर्थ में लिया जाता है। डॉ. हरदेव बाहरी द्वारा रचित शब्दकोश में Typical के अर्थ 'सार्वलाक्षणिक, प्रकारात्मक, विशिष्ट, विशेष, विशेषतासूचक, उपलक्षक, आदर्शभूत, ठेठ, प्रतिरूपक, प्रतिरूपी, यथारूप, प्रारूपिक' दिए गए हैं। मुझे लगता है कि यहां जिस अर्थ में Typical का उपयोग हुआ है वह शायद सार्वलाक्षणिक, आदर्शभूत या प्रारूपिक में सही रूप में व्यक्त होता है। जैसे फूल का एक ऐसा चित्र जिसमें फूल नामक समूह के समस्त लक्षण दर्शाए जाएं। या एक ऐसा चित्र जो एक आदर्श फूल को दर्शाता हो या फूल का एक खाका (प्रारूप) प्रस्तुत करता हो। कई पाठ्य पुस्तकों में प्रारूपिक पुष्प या प्रारूपिक कोशिका शब्द का उपयोग किया जाता है। यहां मैं भी इसी शब्द का उपयोग कर रहा हूं।

कहने का मतलब यह कि तुलनात्मक अध्ययन में भी सामान्यीकरण का अपना महत्व है।

अब लौटते हैं फूलों और कोशिकाओं पर। क्या फूलों में इतनी समानताएं हैं कि सारी विविधता के बावजूद उनका अध्ययन एक श्रेणी के रूप में किया जाए? या क्या कोशिकाओं में है वो बात?

हम यह कह सकते हैं कि फूलधारी पौधों के प्रजनन अंग हैं फूल। काफी बड़ी समानता है यह और इसके आधार पर कहा जा सकता है कि यह अध्ययन की एक श्रेणी है। खासतौर से इसलिए भी कि पौधों के प्रजनन में हमारी विशेष रुचि है - खेती-बाड़ी की दृष्टि से। किसी पौधे पर फूल कब आते हैं, कितनी संख्या में आते हैं, इन चीज़ों पर किन बातों का असर पड़ता है, फूलों का परागण कैसे होता है, फल और बीज कैसे बनते हैं वगैरह प्रक्रियाओं का अध्ययन करना इन्सानों की रुचि का विषय रहा है। इन सबके लिए फूल नामक एक प्रारूपिक धारणा उपयोगी है क्योंकि देखा गया है कि हम फूलों के प्रकार पहचान सकते हैं और प्रत्येक प्रकार के कुछ प्रारूपिक गुणधर्म पहचान सकते हैं। फिर एक किस्म के एक उदाहरण से प्राप्त निष्कर्षों को उस पूरे समूह पर लागू कर सकते हैं।

जीव विज्ञान में प्रारूपिक की धारणा का एक और विशेष योगदान रहा है। जैसे हमने पत्ती की एक प्रारूपिक धारणा बना ली है। इसके आधार पर हम आमतौर पर पत्ती को पहचान लेते हैं। मगर मेरे मित्र किशोर पंवार कभी-कभी किसी कांटे या तंतु को पत्ती कह देते हैं। मुझे तो वह कहीं से पत्ती नहीं लगता मगर किशोर पंवार अपनी बात के पक्ष में तर्क भी प्रस्तुत करते हैं। और पता चलता है कि

कांटों, तंतुओं, हरे तनों जैसी चीज़ों के अध्ययन से एक नई धारणा सामने आती है - समरूप अंग और समकार्य अंग - Homologous organs और Analogous organs। सजीवों में कई अंग ऐसे होते हैं जो मूलतः एक ही अंग के परिवर्तित रूप हैं मगर उनकी बाह्य रचना और कार्य एकदम अलग-अलग हो चुके हैं। जैसे पत्ती के रूपांतरण से बने कांटे (नागफनी), तंतु (मटर), या कलश (कलश पादप)। दूसरी ओर कई अंग ऐसे होते हैं जो एक से दिखते हैं और कार्य भी एक ही करते हैं मगर मूलतः अलग-अलग अंग हैं, जैसे नागफनी के कांटे पत्ती हैं जबकि गुलाब के कांटे कक्षस्थ कलिकाएं हैं। इनका अध्ययन जैव-विकास की प्रक्रिया को समझने में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

प्रारूपिक की शिक्षा

यह तो स्पष्ट है कि प्रारूपिक की अवधारणा अध्ययन की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण चीज़ है। मगर यह गफलत भी पैदा कर सकती है। खासतौर से जब बहुत अधिक विविधता हो, तो एक 'प्रारूपिक' की अवधारणा मुश्किल में डाल सकती है। मेरे ख्याल में एक प्रमुख सवाल यह है कि बच्चों के साथ कहां से शुरू करें - प्रारूपिक धारणा से या विशिष्ट उदाहरणों से? इस सवाल को दो हिस्सों में बांट सकते हैं। पहला तो यह कि 'प्रारूपिक' को समझने के लिए कौन-सा तरीका बेहतर होगा। दूसरा पहलू इसी से जुड़ा है - 'प्रारूपिक' की समझ का मतलब क्या है? इसी पर यह भी निर्भर होगा कि वह समझ आगे अध्ययन में उपयोगी होगी या बाधक।

ऊपर मैंने बेशरम के फूल के साथ अपना अनुभव बयान किया ही है। फूलों की भारी विविधता को देखते हुए मुझे लगता है कि शुरुआत विशिष्ट उदाहरणों से ही की जानी चाहिए। दरअसल फूलों और कोशिकाओं के बारे में तो मुझे प्रारूपिक की अवधारणा का कोई औचित्य ही समझ में नहीं आता।

बहरहाल, बेहतर होगा कि शुरुआत विशिष्ट उदाहरणों से की जाए और फिर, ज़रूरी हो तो, धीरे-धीरे एक प्रारूपिक चित्र बनाया जाए। मगर इसमें एक दिक्कत यह आएगी कि शायद यह प्रारूपिक चित्र उस 'रूढ़ धारणा' या 'रूढ़ चित्र' से मेल न खाए जो किताब में प्रस्तुत हुई है। मगर फिर भी यह बच्चों की समझ की दृष्टि से कहीं बेहतर तरीका होगा। और फूलों का कहीं अधिक समृद्ध चित्रण होगा। मुझे तो यह भी स्पष्ट नहीं है कि उस रूढ़ धारणा तक पहुंचना कितना ज़रूरी है। वैसे भी जैसे-जैसे आप आगे बढ़ते जाते हैं, उस रूढ़ धारणा में भी नई-नई चीज़ें जुड़ती जाती हैं, नए-नए विभेद पैदा होते जाते हैं।

जैसे, ऊपर तो मैंने सिर्फ उन फूलों में विविधता की बात की है जिन्हें आमतौर पर फूल ही माना जाता है। यदि हम गेहूं, मक्का, बरगद, पीपल, घास की बात करेंगे तो विविधता बहुत बढ़ जाएगी। इनके लिए अध्ययन के नए-नए तरीके अपनाने पड़ेंगे। बच्चों को तो छोड़िए, शिक्षकों को भी परेशानी होने लगती है। पीपल और बरगद के फूल को फल मान लेना आम बात है। इस गलतफहमी के चलते सवाल उठता है कि इनमें बगैर फूल के फल कैसे

आ गए। और यदि यह बताया जाए कि फूल ज़मीन के अंदर भी होते हैं तो आप दंग रह जाएंगे। जी नहीं, मैं मूंगफली की बात नहीं कर रहा हूं, उसमें तो फूल ज़मीन के ऊपर ही होते हैं।

यदि अध्ययन के लिए ऐसे एक-एक फूल को लेकर देखते जाएं तो शायद धीरे-धीरे फूल की एक प्रारूपिक समझ बनेगी, जिसे चाहें तो एक चित्र का रूप दे सकते हैं, या एक समझ के रूप में ही सहेज सकते हैं।

'रूढ़ चित्र' की एक और समस्या होती है। हम सब देखते हैं कि किताबों में 'प्रारूपिक' के नाम पर बने इन चित्रों में वास्तविकता काफी बदले हुए रूप में झलकती है। मगर यदि हम स्वयं इन चित्रों को विकसित करने में भागीदार नहीं रहे हैं, तो हम वास्तविकता से इनके सम्बंध को नहीं पकड़ पाते। तब यह देखा गया है कि हमारे वास्तविक अवलोकनों की उपेक्षा होने लगती है। बच्चे या बड़े सभी इन सारी चीज़ों के चित्र वास्तविक चीज़ को देखकर नहीं बल्कि एक अमूर्त धारणा के मुताबिक बनाने लगते हैं। होता यह है कि धीरे-धीरे ये चित्र वास्तविकता का स्थान ले लेते हैं। दरअसल फूल या कोशिका या मकान या किसी भी चीज़ का चित्र हमारे मन में बैठा है वह ज्ञान की उपज है, हमारे द्वारा निर्मित यथार्थ का प्रस्तुतिकरण है, यथार्थ नहीं है। मगर इस प्रस्तुतिकरण को ही जब हम यथार्थ मान बैठते हैं तो गड़बड़ शुरू हो जाती है। इस कारण से भी ठोस उदाहरणों से शुरू करके अमूर्त प्रारूपों की ओर जाना बेहतर है क्योंकि तब आपको यथार्थ और उसके अमूर्त चित्रण के बीच भेद पता रहेगा। आप उस अमूर्त चित्रण का आशय भी समझ पाएंगे और महत्व भी समझ पाएंगे। इसके अलावा यह अमूर्त चित्र आपको यथार्थ की छानबीन में मददगार होगा, बाधक नहीं बनेगा। मगर यदि अमूर्त से शुरू किया तो आप उसी में उलझकर रह जाएंगे। आप उसी आदर्श की तलाश करते रहेंगे, बगैर यह जाने कि वह एक मानसिक चित्रण मात्र है।

यह बात मैंने शिक्षक प्रशिक्षण में भी बार-बार देखी है कि जब कोई पत्ती सामने रखकर उसका चित्र बनाने को कहा जाता है, तो भी शिक्षक पत्ती की 'मानसिक धारणा' का चित्र बनाते हैं। इससे उल्टा भी होता है, खासकर सूक्ष्म चीज़ों के बारे में। होता यह है कि हम वास्तविक अवलोकन करते समय मन में बने 'किताबी' चित्र को तलाशने की कोशिश करने लगते हैं, जो मिलता नहीं। यह बात सूक्ष्म चीज़ों के बारे में ज़्यादा होती है। यानी यदि 'प्रारूपिक' ने बच्चों के दिमाग में घर कर लिया है तो उनको अवलोकन करने में भी दिक्कत आने लगती है क्योंकि जो कुछ दिखता है वह अपेक्षा के अनुरूप नहीं होता (हो भी नहीं सकता)।

यदि प्रक्रिया उल्टी चलती, शुरुआत ठोस उदाहरणों से होती तो वास्तविक कोशिकाएं देखकर एक छवि बनती, कई छवियां बनतीं और फिर कुछ सामान्य गुणधर्म पहचाने जाते। तब बच्चे शायद एक प्रारूपिक चित्र बना पाते और विविधता की अपेक्षा के साथ अवलोकन करते। वे यह भी समझ पाते कि जो प्रारूपिक छवि उन्होंने बनाई है, वह उनके द्वारा वास्तविक

प्रारुपिक - अतिसूक्ष्म से अतिविशाल तक

रूढ़ चित्र की बात वैसे तो सभी चीज़ों पर लागू होती है मगर खासतौर से उन बातों पर लागू होती है जो या तो अतिसूक्ष्म हैं या अतिविशाल हैं। जैसे कोशिका या सौर मंडल। अति सूक्ष्म और अति विशाल चीज़ों के साथ विशेष दिक्कत यह है कि इनका अवलोकन उतनी ही आसानी से नहीं किया जा सकता जितनी आसानी से हम फूल-पत्तियों को देखते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इन चीज़ों की समझ के लिए हम उनके चित्रों पर ही निर्भर हो जाते हैं। इन चित्रों का वास्तविकता से सम्बंध स्पष्ट ही नहीं हो पाता। एक समस्या यह भी आती है कि इस तरह बनाए गए चित्र किसी वास्तविकता के बहुत बड़े या बहुत छोटे प्रस्तुतिकरण होते हैं। इस तरह छोटा-बड़ा करने में कई तरह के सन्निकटन किए जाते हैं। प्रायः यह बात उस चित्र को देखने पर साफ नहीं होती। मैं इसके विस्तार में नहीं जाऊंगा मगर एक उदाहरण दे देता हूं। किताब में सौर मंडल के चित्र वैसे तो किसी पैमाने के आधार पर नहीं बनाए जाते मगर यदि बनाए जाएं तो होगा यह कि या तो सूर्य से दूरी को सही दर्शा पाएंगे या सूर्य और पृथ्वी के तुलनात्मक साइज़ को। इन चीज़ों के बारे में तो और भी ज़रूरी है कि बात ठोस अवलोकनों से शुरू हो।

अवलोकनों के आधार पर बनाई गई है और वह वास्तविकता का एक मॉडल है।

हमारे यहां शिक्षा में आमतौर पर एक प्रारूपिक कथन, एक सार्वभौमिक कथन, एक परिभाषा से शुरू करने की परिपाटी सी बन गई है। अलग-अलग कई तरह के अवलोकनों में से उस प्रारूपिक कथन को उभारने की कोशिश नहीं की जाती। मेरा अपना विचार है कि बच्चों के सीखने की दृष्टि से बेहतर यह होगा कि ठोस अवलोकनों से शुरू करके बच्चों को एक प्रारूपिक को विकसित करने का अवसर दिया जाए।

एक उदाहरण एनसीईआरटी की कक्षा छठवीं की विज्ञान व टेक्नॉलॉजी की पुस्तक से ले सकते हैं। अध्याय है हमारा पर्यावरण।

मेरा दावा है कि यदि आप शहरी बच्चों से पूछेंगे कि क्या उनके शहर में पर्यावरण है तो अधिकांश बच्चों का जवाब ना होगा। और यदि यह पूछ लिया कि क्या चांद पर पर्यावरण है, तो शायद वे चकरा जाएं। क्योंकि पर्यावरण तो वह है जिसमें वे सारे घटक होते हैं जो किताब में दिए हैं, ठीक उसी तरह जैसे फूल तो वह है जो किताब में बना है। किताब में एक 'आदर्शभूत' यानी Idealized पर्यावरण की बात की गई है। यह वह पर्यावरण है जिसमें पर्यावरण नामक धारणा के सारे घटक पाए जाते हैं - पेड़-पौधे, जीव-जंतु जैसे सजीव घटक और पानी, हवा, प्रकाश, मिट्टी जैसे निर्जीव घटक। इस संदर्भ में भी मेरा सोचना यही है कि किसी वास्तविक पर्यावरण से शुरू करके उसमें इन विभिन्न घटकों को खोजने

की कोशिश शिक्षा की दृष्टि से, सीखने की दृष्टि से कहीं ज़्यादा सार्थक होगी।

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में ठोस से अमूर्त की ओर बढ़ने का तरीका ही अपनाया गया था। इस कार्यक्रम के अंतर्गत तैयार की गई पुस्तक बाल वैज्ञानिक में, उदाहरण के लिए, पत्तियों का अध्ययन करने का तरीका यह अपनाया गया था कि बच्चे ढेर सारी पत्तियां ले आते थे और फिर उनमें समानताएं और भिन्नताओं के आधार पर समूह बनाते थे। इस गतिविधि में वे धीरे-धीरे पत्तियों के बारे में तरह-तरह के अवलोकन करते थे और साथ ही यह भी समझते थे कि एक पत्ती के नाम से ही कितनी तरह की रचनाएं संभव हैं। अब कोई कहेगा कि जब वे पत्तियां इकट्ठी करने जाएंगे तो उन्हें बताना तो होगा कि पत्ती किसे कहते हैं। वैसे तो हम एक प्रचलित परिभाषा से शुरू कर सकते हैं मगर यदि किसी को शंका हो, तो शुरुआत यहां से भी की जा सकती है कि शिक्षक एक-दो उदाहरण देकर बता दे कि यह पत्ती है।

इसी प्रकार से फूल के अध्ययन में भी नाना प्रकार के फूलों का अवलोकन करके समूहीकरण किया गया है। यहां न सिर्फ बच्चे फूलों का समूहीकरण करते हैं बल्कि विभिन्न फूलों में कुछ सामान्य बातें खोजते चलते हैं। जैसे वे यह देखते हैं कि अधिकांश फूलों में अंखुड़ी, पंखुड़ी, पुमंग व जायांग पाए जाते हैं और यह भी देखते हैं कि सारे फूलों में इनका एक सामान्य क्रम होता है। वे यह भी देखते हैं कि फूलों में भरपूर विविधता पाई जाती है।

मेरे ख्याल से यह एक महत्वपूर्ण सवाल है कि सीखने-सिखाने में 'प्रारूपिक' की क्या भूमिका है और इसे किस ढंग से अध्यापन में शामिल किया जाना चाहिए। मैं चाहूंगा कि और लोग भी अपने अनुभव इसमें जोड़ें।

सुशील जोशी: एकलव्य द्वारा प्रकाशित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से गहरा जुड़ाव।

